शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
E ISSN 2320 – 0871
17 दिसम्बर 2019
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

हिन्दी उपन्यासों में आर्थिक विमर्श

डॉ॰ मोहन सिंह यादव
शिक्षक,हनुमान सिंह इण्टर कालेज,
देवकली, गाजीपुर, उत्तर प्रदेश

शोध संक्षेप

साहित्य और समाज अन्योन्याश्रित हैं। दोनों ही एक-दूसरे से प्रभावित होते हैं सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक क्षेत्र में होने वाली हलचल और बदलाव का असर साहित्य पर पड़े बिना नहीं रहता, वैसे ही साहित्य का प्रभाव मनुष्य की चित्तवृत्तियों को परिष्कृत करता है। युगानुरूप विषय को साहित्य में अभिव्यक्ति मिलती रही है युगीन सत्य से परे होकर साहित्य की रचना नहीं की जा सकती है। आज का युग सत्य आर्थिक पक्ष से अत्यधिक प्रभावित है। साहित्यकारों ने इसे पहचान कर अपने उपन्यासों में इसका चित्रण किया है। प्रस्तुत शोध पत्र में हिंदी उपन्यासों में आर्थिक विमर्श पर विचार किया गया है।

प्रस्तावना

मनुष्य की विचारधारा को अर्थ (धन) परिवर्तित तथा प्रभावित करता है। वर्तमान पूँजीवादी व्यवस्था के कारण हमारे देश में पूँजीपति, जमींदार, नेता, वकील, डाक्टर, पटवारी, सरकारी कर्मचारी आदि जिसका जहाँ वश चलता है, वहाँ वह शोषण करता है। जिससे अमीर अधिक साधन सम्पन्न और गरीब अधिक गरीब होता जा रहा है। व्यक्ति की ईमानदारी, चरित्र, विवेक, सत्य, धर्म आदि नैतिक मूल्य इस पूँजीवादी व्यवस्था के कारण लुप्त हो गए हैं। हिन्दी उपन्यासकारों ने यह स्पष्ट रूप से घोषित किया है कि जब तक समाज के आर्थिक ढांचे में सुधार नहीं होगा, तब तक सामाजिक व्यवस्था को समाजवादी रूप नहीं मिल सकेगा। अर्थ-संघर्ष को ही सत्य मानकर ये उपन्यासकार शोषक वर्ग के शोषण से मुक्ति पाने के लिए संघर्ष को उपयुक्त मानते हैं। मार्क्सवाद से प्रेरित वर्ग संघर्ष की चेतना से नए मूल्य समाज में प्रकट हुए हैं। आर्थिक वैषम्य को भाग्य की विडम्बना मानने का विरोध करते हुए यशपाल लिखते हैं, "जीवन में आर्थिक परिस्थितियों की अवश्यम्भाविता को स्वीकार करते हुए भी काफी हद तक मानव उस वातावरण को बदल सकता है, क्योंकि वह प्रभाव परोक्ष न होकर प्रत्यक्ष होता है । मार्क्सवाद आर्थिक परिस्थितियों को भाग्य की बात नहीं समझता।"1 उपन्यासकारों ने सामंतों तथा जमींदारों द्वारा की गयी आर्थिक शोषण के वीभत्स स्वरूप को अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। स्वतन्त्रता से पूर्व एवं पश्चात देश में नौकरशाही द्वारा आम जनता का आर्थिक शोषण निरंतर होता ही रहा है। आर्थिक विषमता के परिणामस्वरूप जनता में असंतोष पैदा हुआ, यह असंतोष देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक पहुंचा, लोग संगठित हुए और अपने शोषण के खिलाफ आवाज बुलन्द की। अब अर्थ जीवन मूल्य बन गया है, अर्थ के आधार पर व्यक्ति का मूल्यांकन किया जाने लगा है। अतः अर्थ के बिना व्यक्ति को जीवन व्यर्थ महसूस होने लगा है। परिणामस्वरूप अर्थ के पीछे दौड़ने वाले वर्ग का उदय हुआ। धन-दौलत, सत्ता तथा प्रतिष्ठा आदि के पीछे दौड़ आरम्भ हुई। नतीजा यह हुआ

कि चारों ओर अनैतिकता, भ्रष्टाचार, रिश्वतख़ोरी और बेईमानी की मनोवृत्तियाँ फैलती गयीं। देश में आर्थिक सुधार करने के उद्देश्य से सरकार ने पंचवर्षीय योजनाएँ लागू की और आर्थिक बेहतरी के लिए संकल्प किया, लेकिन सच्चाई यह है कि आजादी के बाद गरीब लगातार गरीब तथा अमीर अधिक अमीर होता गया। हिन्दी उपन्यासों में भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ कहे जाने वाले किसान की आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय चित्रित है। आज भी सभी किसानों की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया जा सका है। कृषि को उद्योग का दर्जा, सिंचाई, स्वास्थ्य, बिजली, यातायात, आवास, आर्थिक सहायता तथा वैज्ञानिक तकनीक से भारतीय किसान आज भी वंचित है। देश में आर्थिक समस्या अधिक जटिल हुई है। युद्ध और देश का विभाजन भी भारत को आर्थिक रूप से अधिक कमजोर कर दिया - "देश को विभाजन से भारत की आर्थिक हानि ही नहीं हुई, अपितु देश की आर्थिक समस्या और जटिल हो गयी ।"2 सन 1962 में चीन से, 1965 और 1971 में पाकिस्तान से हुए युद्ध ने देश के आर्थिक दशा पर प्रतिकूल प्रभाव डाला ।

स्वतन्त्रता के बाद का समय आर्थिक दृष्टि से भारत के नवनिर्माण का काल है। शासन की बागडोर संभालते हुए भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने कहा -"हमें निश्चित रूप से उत्पादन बढ़ाना चाहिए, हमें राष्ट्रीय संपत्ति बढ़ानी चाहिए और साथ ही राष्ट्रीय लाभांश भी। तभी हम भारतीय जनता के रहन-सहन के स्तर को ऊपर उठा सकते हैं।"3 नेहरू जी के आश्वासन से भारतीय जनता में नये आशावाद का विकास हुआ। स्वतन्त्र भारत में आर्थिक विकास के लिए अनेक योजनाएँ बनी। इसके साथ ही जमींदारी उन्मूलन तथा रियासतों का विलय हुआ, जिससे सामंती वर्ग की आर्थिक स्थिति को गहरा धक्का लगा। देश में पूँजीपतियों की स्थिति इतनी मजबूत हो गयी कि देश की राजनीति तथा अर्थनीति पर उनका व्यापक प्रभाव दिखाई देने लगा। यह एक आश्चर्य का विषय है कि उत्पादन बढ़ा तथा नवीन योजनाएँ क्रियान्वित हुई, परंतु देश की आर्थिक समस्याएँ घटने के स्थान पर बढ़ती ही गयी।

हिंदी उपन्यासों में आर्थिक विमर्श

'राधाकांत' उपन्यास में उपन्यासकार ने देश में धन के असमान वितरण की आलोचना मुख्य पात्र राधाकांत से करवाकर देशवासियों की बदल रही आर्थिक चेतना को व्यक्त करने का प्रयत्न किया है। राधाकांत देश की आर्थिक विषमता को देखकर सोचता है- "क्यों किसी को देवात धन दूसरे से मिल जाता है और वह बिना कुछ काम किए सुख से अपने दिन बिताता है और मैं रात-दिन परिश्रम से अपनी हड्डियों को तोड़कर भी सुख से भरपेट नहीं खा सकता।"4 'रंगभूमि' उपन्यास में पूँजीपति अपने अस्तित्व के लिए गरीब मजदूरों का आर्थिक शोषण करता है। कुँवर भरत सिंह पूँजीपति जान सेक्क पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं - "तुमने देश की व्यावसायिक उन्नति के लिए नहीं, अपने स्वार्थ के लिए यह प्रयत्न किया है। देश के सेवक बनकर तुम अपनी पांचों उँगलियाँ घी में रखना चाहते हो। तुम्हारा मनोवांछित उद्देश्य यही था कि नफे का बड़ा भाग किसी होले से आप हजम करो।"5 लेखक ने पूँजीपतियों द्वारा हो रहे शोषण के प्रति असंतोष व्यक्त करते हुए आर्थिक असमानता के विनाश के लिए जनता का आह्वान किया है। 'गोदान' में प्रेमचंद आर्थिक दृष्टि से देश में धन के समान वितरण के पक्षपाती हैं। उपन्यास के पात्र मेहता मिलमालिक मि॰ खन्ना की आलोचना करते हुए

कहते हैं- "आप के मजदूर बिलों में रहते हैं - गंदे बदबूदार बिलों में - जहाँ आप एक मिनट भी रह जायं, तो आप को कै हो जाय । कपड़े जो वह पहनते हैं, उनसे आप अपने जूते भी न पोछेंगे। खाना जो वह खाते हैं, वह आपका कुत्ता भी न खायेगा।"6 'विकास' उपन्यास में देश में आर्थिक असमानता का विरोध करते हुए पात्र मनमोहन नाथ कहता है - "हम क्यों मनुष्य समाज रूपी शरीर में पूँजी का एक हिस्सा दूसरे के अधिकार से दंगा, फरेब, जालसाजी, शक्ति और चातुर्य से छीनकर अपने पुत्र या अन्य किसी व्यक्ति विशेष को दे दें । हमारा यह काम सर्वथा अन्यायपूर्ण है और इसलिए युद्ध, कलह, द्वेष और ईर्ष्या के भाव हैं ।"7 इस प्रकार उपन्यास में आर्थिक चेतना दर्शनीय है ।

'यथार्थ से आगे ' उपन्यास में देश की बदल रही आर्थिक चेतना मिलती है। देश की आर्थिक विषमता ही अधिकांश संघर्षों को जन्म देती है। आर्थिक दुर्दशा का कारण यह है कि भारत के लोग काम ही करना नहीं चाहते, केवल दूसरों की सहायता पर जीना चाहते हैं। उपन्यास का पात्र प्रदीप कहता है - "हमारे देश में काम की कमी नहीं है, कमी ऐसे लोगों की है जो भूले-भटके, बहके हुए लोगों को ठीक मार्ग सुझा सकें"8 आलसी एवं स्वार्थपूर्ण प्रवृत्ति भी देश के विकास में बाधक है। 'सुनीता' उपन्यास में आर्थिक शोषण के प्रति असंतोष व्यक्त करते हुए लेखक लिखता है -"यह पैसे की संस्था बड़ी पेचीदा हो गयी है। अनुत्पादक चालाकियों से सोने का ढ़ेर बन जाता है, उत्पादक ठोस मेहनत करने पर तांबे के पैसों का भी भरोसा नहीं बनता। अब खराबी क्या है।"9 उपन्यास में पूँजीपतियों का विरोध करते हुए आर्थिक शोषण की व्यवस्था को बदलने का आग्रह किया गया है। 'दादा कामरेड' उपन्यास का पात्र हरीश देश में अर्थ के समान वितरण द्वारा एकीकरण लाना चाहता है। हरीश कहता है -"हमारा विश्वास है कि प्रत्येक मनुष्य को अपने परिश्रम के फल पर पूर्ण अधिकार होना चाहिए। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से एक श्रेणी दूसरे श्रेणी से, एक देश दूसरे देश से, उसके परिश्रम का फल छीन ले तो यह अनुचित है, अन्याय है, अपराध है। यह समाज में होने वाली भयंकर हिंसा और डकैती है।"10 हरीश के वक्तव्य में पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के प्रति आक्रोश है। 'हीरक जयंती' में राजनेता समाज सेवा का झूठा नाटक करते हैं। राष्ट्र सेवा के नाम पर अपने स्वार्थों की पूर्ति करने में लिप्त हैं। नेता जिस बहाने से भी हो सके, जनता का धन लूटते हैं और जनता का आर्थिक शोषण करते हैं। बुझावन राम सोचता है - "हरिजनों की सेवा के नाम पर ऊँची जाति के धूर्त लोग सरकार को ठग रहे हैं, करोड़ों की रकम खा-पका गए हैं, जनजातियों के नाम पर कितने सेवा मण्डल चालू करवा रहे हैं, कितने छात्रावास, कितने आश्रम स्थापित करवा रहे हैं, असवर्णों और परिगणितों के नाम, मगर उनमें पलता है कौन।"11 इस उपन्यास में गरीब जनता द्वारा कमाए गए धन को नेताजी के सम्मानार्थ देना पात्र धर्मराज सिंह को व्यर्थ लगता है। इसका विरोध करते हुए धर्मराज सिंह कहता है- "लाखों की रकम बटोर ली गयी है। यह जयंती नहीं है जयंती की चोंच का चोंचला है।"12

'धरती' उपन्यास में आर्थिक शोषण एवं भययुक्त पूँजीवादी व्यवस्था की आलोचना करता हुआ प्रगतिशील पात्र मोहन कहता है- "हमारे देश के लिए कितने अफसोस की बात है कि हम पर हुकूमत करने वालों में आज एक भी आदमी ऐसा नहीं दिखाई देता है जो इस साम्राज्यवादी

व्यवस्था की सड़ी हुई परंपरा को तोड़ सके।"13 यहाँ पूँजीवाद के साम्राज्य को समाप्त करने के लिए उपन्यासकार द्वारा देशवासियों का आह्वान किया गया है। लेखक आर्थिक शोषण से मुक्त समाज की स्थापना के लिए लोगों को जाग्रत कर रहें हैं। उपन्यास का पात्र मोहन कहता है- "अपने देश में हम लोग किसानों और मजदूरों का राज्य स्थापित करेंगे - वर्गहीन समाज की स्थापना हमारा ध्येय है। शोषक वर्ग को समाप्त किए बिना हमारा यह ध्येय पूरा नहीं हो सकता।"14 उपन्यास में वर्तमान आर्थिक व्यवस्था के प्रति आक्रोश व्यक्त हो रहा है। और साथ ही हिन्दी उपन्यासों में आर्थिक शोषण के नये-नये तरीके अत्यन्त वीभत्स तथा अमानवीय रूप से परिलक्षित हो रहें हैं। रामदरश मिश्र 'जल टूटता हुआ उपन्यास में जमींदारों के आर्थिक शोषण से मजदूर व किसान दासता का जीवन व्यतीत करते हैं - "महीप सिंह के दरबार के मजूर, मजूर नहीं है, यंत्र हैं काम करते-करते जरा सा किसी के हाथ थम गए कि मालिक गालियों की बौछार करने लगा। कोई मजूरिन अपने नन्हें से बालक को दूध पिलाने के लिए उठ गयी तो गाली तो मिली ही मजूरी भी काट ली गयी।"15 शोषण की यह चरम अवस्था है, जिसकी उपन्यासकार ने आलोचना की है। सरकार की विचारधारा ने पूँजीपतियों को ही लाभ पहुँचाया है। आजादी के बाद सत्तारूढ़ दल ने विकास के नाम पर सर्वसाधारण जनता को धोखा ही दिया है, विकास का यथेष्ट लाभ किसानों और मजदूरों को नहीं मिल पाया है। उपन्यास का पात्र जग्गू सोचता है -"आजादी मिले कितने वर्ष हो गए। नेताओं ने कितने सपने देखे थे और लोगों को दिखाए थे। गरीबों को, अनाथों को, अछूतों को नई जिन्दगी मिलेगी, उन्हें खेत मिलेंगे, उनके लड़के पढ़ेंगे-लिखेंगे, अफसर बनेंगे, उनकी बहुएँ भी सम्मान और सुख की जिन्दगी बिता सकेंगी। गरीबों और अछूतों के पास भी मिट्टी का ही सही एक मकान हो, उनके पास कुछ खेत हों, उनके लड़के भी साफ-सुथरे रहकर स्कूल जाए, उनकी दवा का इंतजाम हो और जब आकाश में बादल घिरे तो उनकी भी बहुएँ राग अलाप उठें"16

'पार्टी कामरेड ' में देश के पूँजीपति मजदूरों का शोषण करते हैं और मुनाफा कमाते हैं। मजदूरों के आर्थिक शोषण के संदर्भ में लेखक कहता है - "मजदूरों को पदार्थों को बनाने की ही मजदूरी कम मिलती है और बाजार में वस्तु का दाम अधिक रहता है। यह अंतर ही मालिक का मुनाफा और मजदूर का शोषण है।"17 यहाँ लेखक ने इस पूँजीवादी व्यवस्था के प्रति नाराजगी व्यक्त की है। 'जहाज का पंछी' के उपन्यासकार ने पूँजीपतियों के शोषण की तीखी आलोचना की है। पीड़ित मानवता के प्रति सहानुभूति और सहृदयता का ढोंग करने वालों की कटु शिकायत करता हुआ उपन्यास का नायक कहता है - "पीड़ित मानवता की सेवा का जो नाटक तुम लोग रचाए हो उसके भीतर से उठने वाली असहाय और उपेक्षित मानवता की पुकार को लाख चेष्टा करने पर भी अधिक समय तक दबा न सकोगे। तुम और तुम्हारे ही जैसे स्वाधिकार प्रमत्त दूसरे व्यक्ति मेमने की तरह खाल ओढ़े हुए नरपिशाच हैं।"18 उपन्यासकार ने पूँजीपतियों के प्रति असंतोष व्यक्त किया है। लेखक ने नायक के माध्यम से यह संकेत दिया है कि अब देश की जनता अपने आर्थिक शोषण के विरोध में पूंजीपतियों के सामने खड़ी होने लगी है। नायक, भादुड़ी जैसे पूँजीपतियों पर व्यंग करता हुआ कहता है -"मैं न किसी गरीब की लगाई रोजी छीनना चाहता हूँ, न चोरी को अपना

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 दिसम्बर 2019
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

पेशा बनाने की इच्छा रखता हूँ न किसी की बहु-बेटियों पर बुरी नजर रखता हूँ न हजारों-लाखों आदमियों के शोषण द्वारा आर्थिक चर्बी चढाकर मोटा होना चाहता हूँ।"19 इस प्रकार उपन्यास का साधनहीन नायक प्रत्यक्ष रूप से अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए परोक्ष रूप से पूँजीपति भादुड़ी महोदय की आलोचना करता है। वास्तव में जो समाज के अपराधी हैं, समाज में उन्हें दण्ड नहीं मिलता, लेकिन जो निरपराध हैं उन्हें समाज दोषी ठहराता है। लेखक के विचार से इस युग की इससे बड़ी विडम्बना क्या हो सकती है जब एक ओर मानवता पिसती है और दूसरी और थोड़े से व्यक्ति वैभव के समस्त उपकरणों को इकट्ठा कर देश के अधिकांश लोगों को जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं से वंचित कर देते हैं।

भगवतीचरण वर्मा 'टेढ़े मेढ़े रास्ते' उपन्यास में आर्थिक चेतना के कुछ प्रसंग वर्णित हैं। मनमोहन तथा उमानाथ वर्ग संघर्ष की चेतना को प्रस्तुत करते हैं और वर्ग रहित समाज के आकांक्षी हैं। पूँजीपति और जमींदार दोनों मजदूरों एवं किसानों का आर्थिक शोषण सदा से करते आए हैं, स्वतन्त्रता के उपरांत भी करते रहेंगे, ऐसा उमानाथ का अनुमान है। वह विश्वक्रांति करके पूँजीपतियों को पराजित करना चाहता है। उमानाथ इस संदर्भ में कहता है -"इस राष्ट्रीयता की लड़ाई में हमें, हम मजदूरों को, हम किसानों को न कोई दिलचस्पी हो सकती है और न कोई होनी चाहिए। हमें पूँजीपतियों से लड़ना है, हमें संगठित होकर श्रेणीवाद का विनाश करना है तभी हमें वास्तविक स्वतन्त्रता मिलेगी।"20 'मधुर स्वप्न' उपन्यास में सामान्य जनता के हित के लिए लेखक ने आर्थिक समानता की बात करते हुए कहा है -"इस दुनिया से दुखों को दूर करने के लिए मनुष्य मात्र में समता, भोगों की समता, कामों की समता करना ही एक मार्ग है। विषमता से मुट्ठीभर लोग सुखी रह सकते हैं और वह मुट्ठीभर भी निश्चिन्त जीवन नहीं बिता सकते। मनुष्य जब भी व्यापक सुख की चिंता करेगा, वह इसी निश्चय पर पहुँचेगा कि सबके सुखी होने पर ही हम सुखी रह सकते हैं। मैं और मेरा का ख्याल छोड़ विश्व को एक कुटुम्ब बना उसमें समता की स्थापना ही सारे रोगों की दवा है।"21 उपन्यास का प्रगतिशील पात्र अन्दर्जगर स्वर्ग और नरक को अलौकिक जगत की वस्तु नहीं मानता। वह आर्थिक विषमता को दूर कर धन के समान वितरण द्वारा नरक को स्वर्ग में परिणित करने का स्वप्न देखता है। मंदक और अन्दर्जगर दोनों आर्थिक वैषम्य को मिटाकर बहुजन हिताय-बहुजन सुखय सिद्धान्त की स्थापना करते हैं। अन्दर्जगर श्रम की समानता का महत्व स्पष्ट करते हुए कहता है -"समानता से उत्पन्न की हुई सामाग्री ही भोग साम्य को भी स्थायी रख सकती है, साथ ही उत्पादन का श्रम बड़े, आनंद की वस्तु है।"22 अन्दर्जगर के दृष्टिकोण से स्पष्ट है कि लेखक ने आर्थिक वैषम्य को मिटाकर साम्य पर बल दिया है, जो साम्यवादी आर्थिक चेतना का लक्ष्य है।

'बूँद और समुद्र' उपन्यास में नारी की परतंत्रता का कारण वनकन्या आर्थिक असमानता मानती है तथा समाजवाद लाने के लिए सज्जन को सदैव प्रेरित करती है। वह सज्जन से कहती है - "पूँजीवाद को उखाड़ फेंकना उससे ज्यादा कठिन काम है सज्जन। इसके साथ-साथ एक पूरी सामाजिक चेतना बदलेगी। सबसे पहले तो स्त्री-पुरुष का आपसी नाता बदलेगा।"23 वनकन्या के माध्यम से उपन्यास में देश की आर्थिक चेतना को अभिव्यक्त किया गया है। "बूँद का अडिग अस्तित्व सारे लखनऊ के समाज में चर्चा का

विषय बन जाता है लेखक ने साम्यवादी मान्यताओं को ही दृष्टि में रखकर वनकन्या के चरित्र का निर्माण किया है और उससे आर्थिक स्वतन्त्रता का नारा लगवाया है।"24 आज का नारी समाज आर्थिक परतंत्रता के कारण कितना शोषित है इसका उदाहरण उपन्यास में मिलता है। 'कितने चौराहे' में आर्थिक शोषण का विशद चित्रण लेखक ने किया है। पूँजीवादी व्यवस्था को उपन्यासकार ने आर्थिक शोषण का मुख्य कारण माना है। इस पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के कारण गरीब व्यक्ति जानवर के समान जीवन जीने को विवश होता है। "हर साल मलेरिया और कालाजार अनेक प्रतिभावान लड़कों को लीलते हैं। महँगाई, अकाल, अनावृष्टि के मारे हुए किसानों पर जमींदारों का और जुल्म-अत्याचार होता है। अदालत में कुर्क किए माल - मवेशी की नीलामी होती है, जमीनें छीनी जाती हैं। फसल लूटी जाती है - मुँह पर पट्टी बांधे गुलामों की टोली सिर झुकाकर आगे बढ़ रही है, क्रूर नौकरशाही चाबुक फटकार कर पीटती है जानवरों को।"25 भगवतीचरण वर्मा के 'सबहिं नचावत राम गोसाईं' उपन्यास में आर्थिक विषमता पर संवेदनशीलता के साथ विचार किया गया है। पूँजीपति कितने सुनियोजित ढंग से जनता का आर्थिक शोषण करता है, उपन्यास में मेवालाल के माध्यम से यह बात स्पष्ट होती है - "उन्होंने अपने यहाँ तीन मुनीम रख लिए थे, एक जाली बही-खाते और दस्तावेज़ बनाता था, दूसरा ब्याज का हिसाब-किताब रखता था और तीसरा मुनीम दिनभर कचहरी में रहकर मुकदमेंबाजी करता।"26 उपन्यास का प्रगतिशील पात्र कामरेड रवीन्द्र किसानों को उचित मुआवजा दिलाने के लिए संघर्ष करता है -"हमलोग तो साधनहीन, उत्पीड़ित और शोषित वर्ग के आदमी हैं। सहायता करने के साधन हम लोगों के पास कहाँ ? और यह सरकार पूँजीवादी सरकार है, आप स्वयं पूंजीपति हैं तो इस सरकार और आप का भरोसा कैसे किया जा सकता है ? नहीं तो सेठ इन किसानों को उचित मुआवजा मिलना चाहिए।"27 'अमृत और विष' उपन्यास में अमृतलाल नगर ने पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के दुष्परिणामों का चित्रण किया है। पूँजीवादी व्यवस्था के नियमों से बँधकर शोषित वर्ग कभी स्वतंत्र नहीं हो सकता है। इस व्यवस्था ने भारतीय नवयुवकों को कुंठित बना दिया है। इस संदर्भ में उपन्यास के पात्र आत्माराम कहते हैं -"उनके सामने कुंठित नौजवान भारत बैठा था, जो बेकार है, दरिद्रता से नफरत करता है, उन्नतिशील जीवन चाहता है और न मिलने पर, दुत्कारे जाने पर कुंठित आत्मसम्मान के लिए क्षुद्र और स्वार्थी हो जाता है। वे अभी अपराधी नहीं विकृत विद्रोही भर हैं।"28 पूँजीवादी व्यवस्था की सच्चाई यह है कि इसमें साधनवानों को साधनहीनों से परिश्रम करवाकर अधिक मुनाफा कमाने की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार स्पष्ट है कि उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में उन स्थितियों का यथार्थपरक विश्लेषण प्रस्तुत किया है, जिसके कारण आज भी समाज में विषमता व्याप्त है। धन के असमान वितरण ने अनेक प्रकार की समस्याओं को जन्म दिया है। समाज की असंवेदनशीलता भी परिलक्षित होती है। वैश्वीकरण ने इसमें और इजाफा किया है। पूंजीवाद ने सभी को अपने में समाहित कर लिया है। आज जीवन का कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं है, जो इसके दंश से प्रभावित न हो।

संदर्भ ग्रंथ

1 मार्क्सवाद, यशपाल, पृष्ठ 69

2 हिन्दी उपन्यास : सामाजिक संदर्भ, डॉ॰ बालकृष्ण गुप्त, पृष्ठ 43

3 माडर्न इंडिया, सर परसीवल ग्रीपथ्स, पृष्ठ 223

4 राधाकांत, ब्रजनन्दन सहाय, पृष्ठ 3

5 रंगभूमि, प्रेमचन्द, पृष्ठ 210

6 गोदान, प्रेमचन्द, पृष्ठ 291

7 विकास, प्रतापनारायण श्रीवास्तव, पृष्ठ 497

8 यथार्थ से आगे, भगवती प्रसाद वाजपेयी, पृष्ठ 56

9 सुनीता, जैनेन्द्र कुमार, पृष्ठ 30

10 दादा कामरेड, यशपाल, पृष्ठ 175

11 हीरक जयंती, नागार्जुन, पृष्ठ 51

12 वही, पृष्ठ 76

13 धरती, भैरवप्रसाद गुप्त पृष्ठ 397

14 वही, पृष्ठ 589

15 जल टूटता हुआ रामदरश मिश्र, पृष्ठ 90

16 यथोपरि, पृष्ठ 335

17 पार्टी कामरेड, यशपाल, पृष्ठ 17

18 जहाज का पंछी, इलाचन्द्र जोशी, पृष्ठ 44

19 वही, पृष्ठ 238

20 टेढ़े मेढ़े रास्ते, भगवतीचरण वर्मा, पृष्ठ 482

21 मधुर स्वप्न, राहुल सांकृत्यायन पृष्ठ 281

22 वही, पृष्ठ 110

23 बूँद और समुद्र अमृतलाल नागर पृष्ठ 489

24 हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, डॉ॰त्रिभुवन सिंह पृष्ठ 525

25 कितने चौराहे, फणीश्वरनाथ रेणु, पृष्ठ 122

26 सबहिं नचावत राम गोसाई - भगवतीचरण वर्मा, पृष्ठ- 24

27 वही, पृष्ठ 193

28 अमृत और विष, अमृतलाल नागर पृष्ठ 689